शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 फरवरी 2024
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

डॉ. रमेश पोखरियाल 'निशंक' कृत उपन्यासों में प्रकृति चिंतन

कुलदीप कुमार (शोधार्थी)
डॉ. अर्चना सिंह
एसोसिएट प्रोफेसर (हिन्दी विभाग)
डी.ए.वी. स्नातकोत्तर महाविद्यालय
बुलन्दशहर, उत्तरप्रदेश, भारत

शोध संक्षेप

किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व का निर्माण आमतौर पर प्रकृति के सान्निध्य और भौगोलिक परिवेश के आधार पर होता है। 'देवभूमि उत्तराखण्ड में जन्मे डॉ. रमेश पोखरियाल 'निशंक' पहाड़ की संस्कृति एवं जीवन शैली में ही पले बढ़े हैं, जहाँ उन्होंने निरंतर पहाड़ों के सौन्दर्य का सूक्ष्म निरीक्षण किया है। जिसकी अभिव्यक्ति उन्होंने लोकतात्विक भावनाओं के साथ की है। 'निशंक' जी के साहित्य में उस प्रकृति चित्रण की छवि निरंतर ही विद्यमान है, जो पहाड़ी परिवेश को सुधारवादी दृष्टि प्रदान करती है। जिन पहाड़ों ने उनका पालन-पोषण किया उनके प्रति उनका समर्पण और संवेदना उनके साहित्य में दिखाई पड़ती है। पहाड़ी जीवन एवं वहाँ की संस्कृति और प्रकृति के संरक्षण के लिए उनमें जो पीड़ा है, पहाड़ों का जो असहनीय दर्द है, उसके समाधान के लिए उन्होंने राजनैतिक क्षेत्र में कदम रखा। अपने राजनैतिक जीवन से उन्होंने अपनी संस्कृति, प्रकृति और धरोहरों के संरक्षण का प्रयास किया। एक साहित्यिक संवेदना वाले व्यक्ति का नेता बनकर यथार्थ के धरातल पर कार्य करना कोई दैवीय कृपा ही हो सकती है। राजनैतिक क्षेत्र में आकर वे पहाड़ी जीवन को सुखद करने और प्रकृति को यथार्थ धरातल से संरक्षित एवं परिवर्तित करने के प्रयास में अपनी मातृभूमि के प्रति सचेत दिखाई पड़ते हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में निशंक जी के उपन्यास साहित्य में अभिव्यक्त प्रकृति चिंतन का अध्ययन किया गया है।

उपन्यासों में प्रकृति चिंतन

व्यक्ति की जन्मभूमि का सौन्दर्य एक तरह से व्यक्ति का संस्कार एवं प्रेरणा भी रहता है। उसका सामाजिक जीवन, प्रकृति निरीक्षण और प्रकृति प्रेम तन्मयता का एक अंग रहता है, जिसमें वह निरन्तर भावविभोर रहता है और समय-समय पर उसकी अभिव्यक्ति करता है। 'निशंक' जी भी संवेदनाओं को अभिव्यक्त करने में निपुण हैं।

उपन्यास 'भागोंवाली' में निशंक जी ने एक स्त्री की मर्मभेदी कथा को बुना है। इसमें मुख्य पात्र भागोंवाली हेडमास्टर शास्त्रीजी की पत्नी है, जो गाँव वालों के लिए आदर्श बन जाती है। इस कथा में पर्वतीय स्त्रियों के त्याग, ममत्व एवं समर्पण की झांकियां हैं। भागोंवाली अम्मा के चार पुत्र हैं। अम्मा और शास्त्रीजी इन्हीं चार पुत्रों को अपनी पूंजी मानते हैं। मैदानी भाग से पहाड़ी क्षेत्र में गया यह परिवार प्रकृति को अंगीकार किये हुए है। शास्त्रीजी का पहाड़ी जीवन एवं प्रकृति से गहरा लगाव है। उनके चरित्र की विशेषता के बारें में निशंक जी लिखते हैं, "तब से शास्त्रीजी पहाड़ के एक जिले से दूसरे जिले, दूसरे जिले से तीसरे जिले हर तीन-चार वर्षों में नौकरी करते रहे। पहाड़ की आबोहवा और जीवन उन्हें

इतना रास आया कि उन्होंने कभी भी अपने विभाग में पहाड़ से मैदान में ट्रांसफर चाहने की अरजी तक नहीं दी।"[1]

इसी तरह 'मेजर निराला' उपन्यास का मुख्य पात्र मेजर निराला है, जो एक देशभक्त एवं जांबाज सिपाही है। वह विभिन्न परिस्थितियों से जूझते हुए भी अपने गाँव से लगाव रखता है। वह अपनी सारी छुट्टियाँ गाँव वालों के साथ खेत-खलिहानों में बिता देता है। वह गाँव के लोगों के दुःख-दर्द में सहभागी है और हर तरह से उनकी मदद में आगे रहता है। ड्यूटी के दौरान भी वह अपने फौजी साथियों से सदैव गाँव एवं खेत-खलिहान की बातें करता है। युद्ध के क्शिेष दिनो में उसे मोर्चा संभालना है, इसलिए छुट्टी पर भेजा जाता है। मेजर निराला की घर वापसी का वर्णन करते हुए लिखते हैं "तीन धारा में बस रुकी, छोटी-सी जगह है। कभी यहाँ पहाड़ी से निकलते शीतल जल के तीन धारें हुआ करती थीं। उन्हीं धारों के अगल-बगल ककड़ी, खीरा, मकई और जलजीरा की अस्थाई दुकानें लगाकर स्थानीय गाँव के कुछ लोग अपना व्यवसाय करते थे। समय बदला वनों के अत्यधिक दोहन, पर्यावरण असन्तुलन एवं खनन आदि अन्य कारणों से जल के स्रोत नीचे बैठ गये हैं। अब यहाँ तीन धारें तो नहीं हैं, अलबत्ता पहाड़ी से पानी की बारीक धार और कई जगह से पानी टपकता प्रतीत होता है। ककड़ी, खीरा, मकई एवं जलजीरा के व्यवसाय छोड़कर अब लोगों ने यहॉ पर बड़े-बड़े होटल बना लिए हैं। यहाँ पर अब यात्री खाना खाते हैं।"[2]

वैश्वीकरण एवं आधुनिकीकरण ने मानव के स्वभाव को संस्कृति एवं प्रकृति के प्रति संवेदनहीन कर दिया है और पैसा ही उनके लिए सब कुछ है। 'निशंक' जी यथार्थ धरातल के वास्तविक परिवेश को कभी स्वयं तो कभी अपने पात्रों के माध्यम से रेखांकित करते हैं। पहाड़ के लोग साफ और सच्चे हृदय वाले होते हैं। उनका यह गुण उनकी परम्पराओं में दिखाई पड़ता है। 'निशंक' जी इनसे बिल्कुल अछूते नहीं हैं। साथ ही साथ वे गाँव के पहाड़ी सौन्दर्य को व्यक्त करने में सिद्धहस्त हैं। प्रातःकालीन पहाड़ी गाँव का यह प्राकृतिक दृश्य देखिए - "मेलू ग्वारीवाल और पइयां के फूलों की खुशबू समेटे शीतल पवन तन-मन को आनन्दित कर रही है, पूरब दिशा में दूर ऊँची-नीची पहाड़ियों के साथ लाल सुर्ख रंग की आभा बिखरी हुई है, सूर्य भगवान के शीघ्र प्रकट होने की ओर संकेत कर रही है। गाँव के नीचे दूर-दूर तक फैले सीढ़ीनुमा खेतों में पूरी हलचल है।"[3]

कथाकार 'निशंक' जी ने ग्रामीण एवं शहरी जीवन को भली-भाँति जीया है। वे ग्रामीण जीवन के प्रति श्रद्धावान हैं। इसी के अन्तर्गत 'मेजर निराला' उपन्यास में उनकी दूरदर्शिता दिखाई देती है और वह दृढ़ता से यह कहने में संकोच नहीं करते कि कुछ दशकों में शहरी लोग गाँव की ओर पलायन करना शुरू कर देंगे। जब मेजर निराला की पत्नी उन्हें शहर में लड़के की पढ़ाई, वहाँ जायदाद एवं घर लेने की बात कहती है तो मेजर निराला कहते हैं - "तुम बहुत भोली हो सावि ! परदेश में रखा ही क्या है, जोकि अपनी पुस्तैनी जमीन, जायदाद और घर आंगन छोड़कर बस जायें। शोरगुल, गंदगी, आये दिन दुर्घटनाएँ, लड़ाई-झगड़ा, मारपीट और आतंकवाद इन सबसे तो परदेशी स्वयं ही तंग आ चुके हैं। वर्षों पूर्व पलायन कर चुके लोग सहमे हुए हैं और लौटकर पहाड़ में अपनी जड़ें और जमीन-जायदाद ढूंढ रहे हैं। यही नहीं फैक्ट्रियों, उद्योगों और गाड़ियों के धुंए ने इतना प्रदूषण फैला दिया है कि वहाँ इंसान को ताजी हवा तक नसीब नहीं।"[4]

'निशंक' जी प्रकृति के यथार्थ को अभिव्यक्त करते हुए कभी गम्भीर मुद्दों को रेखांकित करते हैं तो कभी प्रकृति के सौन्दर्य में डूबते दिखाई पड़ते हैं। उपन्यास 'छूट गया पड़ाव' में वे एक गाँव 'बिनगढ' की कथा बुनते हैं, जिसमें अध्यापिका सरोज पूरे गाँव को साक्षर करने की जिम्मेदारी निभाती है। उस गाँव के प्रकृति सौन्दर्य का वर्णन निशंक जी इस प्रकार करते हैं, "बांज-बुराश के घने दिलकश जंगलों के बीच बसा बड़ा ही मनोरम गाँव है बिनगढ।"

"न यहाँ खाने-पीने की चिन्ता, न लकड़ी चारे की, खेती बाड़ी ही इतनी की नौकरी-चाकरी की जरूरत ही नहीं। जमीन जैसे सोना उगलती हो। पथरीले पहाड़ में भी एसी उर्वर भूमि यकीन नहीं होता।"[5]

निशंक जी वर्णन करते हैं कि यह गाँव पूरे साल हरा-भरा रहता है। जहाँ खाने-पीने की कोई चिन्ता नहीं है। पथरीले पहाड में भी यहाँ की भूमि उर्वर है, जिसमें प्रायः सभी आवश्यक साग-सब्जी, फल आदि उगाये जाते हैं। यहाँ गेहूं, चावल, मक्का, दाल जैसे अनाज, कद्दू, ककड़ी, लौकी, तोरई, बैंगन आदि सब्जियाँ तथा मालटा, संतरे, अखरोट, दाडिम, अनार, काफल, हिंसर, किनगोडे आदि फलों से भरे बाग हैं, जिसके कारण यहाँ रोजगार न होते हुए भी लोग आत्मनिर्भर हैं।

"ऐसा अद्भुत है बिनगढ़। आँखों देखे बगैर तो किसी को यकीन ही न हो। इसलिए जो भी सुनता उसे यह मनगढंत लगता। किसी कवि लेखक की कपोल कल्पना-सा। उन्हें यह समझाना पड़ता, यह कोई मन का गढ़ा-वढ़ा नहीं, बिल्कुल सच है। बिनगढा। शायद इसी बिन गढ़े से ही इसका नाम पड़ गया हो बिनगढ़।"[6]

'निशंक' जी के साहित्य में प्रकृति के घुले-मिले तत्व हैं, जो लोकजीवन में सामाजिकता एवं वास्तविकता की अनुभूति देते हैं।

'पल्लवी' उपन्यास में कथानायक ध्रुव की मौत का आभास इस उपन्यास की नायिका पल्लवी को सपने में हो जाता है। वहीं कथानक में प्रकृति के सजीव वर्णन के साथ 'बिछड़े बछड़े की मर्मांतक पुकार, सियारों का रोना, कागा (कौवे) का अलसाये मुँडेर पर बैठना, सभी लोक-विश्वास एवं प्रकृति के प्रतीक हैं।"[7]

पहाड़ एवं प्राकृतिक क्षेत्र में पले-बड़े होने के कारण डॉ.निशंक का लगाव पहाड़ एवं प्रकृति से अटूट है। पहाड़ की संवेदना को इन्होंने बखूबी समझा है। सन् 2013 में आई केदारनाथ आपदा से वे बहुत दुःखी हुए। प्रकृति के इस रौद्र रूप को एक साहित्यकार होते हुए उन्हें अपने शब्दों में व्यक्त करना आसान न रहा। उन्होंने इस घटना के बारे में लिखा, "अपने जीवन में मैंने कभी इतनी बड़ी त्रासदी नहीं देखी थी। दृश्य देखते ही जब उस घड़ी की कल्पना होती, जब यह घटित हुआ होगा तो मन मस्तिष्क जैसे चेतना शून्य प्रतीत हुआ। कैसा हृदय विदारक रहा होगा वह मन सोचकर ही काँप उठता है।"[8]

मनुष्य के लिए प्रकृति ही भगवान है। प्राचीनकाल से ही वह वृक्ष पर्वत, नदी, जंगल, धरती, आकाश, समुद्र, वर्षा, पानी, हवा, बादल आदि को देवताओं की तरह पूजता है। यही मनुष्य की प्रकृति उपासना है। मनुष्य निरन्तर प्रकृति से लाभान्वित एवं प्रफुल्ल रहा है और कभी-कभी इसके रौद्र रूप से डरा भी है। समय-समय पर होने वाली प्राकृतिक आपदायें मनुष्य का प्रकृति के दोहन एवं इससे छेड़छाड़ का ही परिणाम है। निशंक जी 'अपना-पराया' उपन्यास में इसी दृष्टिकोण से मनुष्य को सचेत करते हैं। वे गाँव की प्रकृति में तेजी से हो रहे परिवर्तन के लिए चिंतित हैं, "गाँव के बड़े-बूढ़े बताते हैं कि पानी और जंगल जहाँ अच्छा मिला लोग वहीं बस

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 फरवरी 2024
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

गये। फिर वह जंगल ऊँची पहाड़ी या चोटी पर ही क्यों न हो। किन्तु अब न तो ये जंगल ही अपने रहे और न पानी के वे प्राकृतिक स्रोत ही। बस रह गई तो यह दुर्गम खड़ी चढ़ाई, बंजर होते खेत-खलिहान और तेजी से वीरान होते घर-गाँव।"[9]

निष्कर्ष

निष्कर्षतः डॉ. रमेश पोखरियाल 'निशंक' अपने उपन्यासों में प्रकृति चेतना एवं आंचलिक परिवेश का चुनाव करते हैं। उनके द्वारा चुने गये पर्वतीय क्षेत्र एवं गाँव सजीवता का पर्याय हैं, जो प्रकृति एवं लोक जीवन को प्रमाणिकता प्रदान करते हैं। निशंक जी ने देवभूमि उत्तराखण्ड के भौगोलिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक वातावरण की गहराइयों का अतिसूक्ष्म ढंग से अपने साहित्य में वर्णन किया है। पर्वत, चोटियाँ, नदियाँ, झरने, घाटियाँ आदि रम्य क्षेत्र उनकी लेखनी से निरन्तर वरदान पाते रहे हैं। उन्होंने हमेशा प्रकृति प्रदत्त चीजों की वकालात की है और जन सामान्य के पथ प्रदर्शक बने हैं। अतः डॉ.निशंक प्रकृति के एक सच्चे प्रहरी हैं, जिन्होंने अपने उपन्यासों के माध्यम से प्रकृति की उपयोगिता एवं उसके महत्व तथा वर्तमान में मनुष्य द्वारा प्रकृति प्रदत्त चीजों के दोहन एवं उनसे छेड़छाड़ से होने वाले सामाजिक दुष्परिणामों से लोगों को अवगत कराया है। उन्हें प्रकृति के प्रति जागरूक करने और उसके सान्निध्य में रहने के लिए प्रेरित किया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1 निशंक, भागोंवाली, प्रभात प्रकाशन दिल्ली, पृष्ठ 8
2 निशंक, मेजर निराला, वाणी प्रकाशन दिल्ली, पृष्ठ 22
3 वही, पृष्ठ 36
4 वही, पृष्ठ 53-54
5 निशंक, छूट गया पड़ाव, वाणी प्रकाशन दिल्ली, पृष्ठ 21
6 वही, पृष्ठ 22
7 डॉ.कपिलदेव पंवार, निशंक के साहित्य में लोकतत्व, प्रभात प्रकाशन दिल्ली, पृष्ठ 124
8 वही, पृष्ठ 28
9 निशंक, अपना-पराया, प्रभात प्रकाशन दिल्ली, पृष्ठ 11